पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में

आपराधिक विविध संख्या 2016 का 55792

थाना कांड संख्या 164 वर्ष 2016 थाना-पीरबाहोर, जिला-पटना से उत्पन्न

==========

1. असदुल हमद उर्फ मोहम्मद असदुल हमद उर्फ मोहम्म्द असदुल उर्फ असदुल और अन्य, पुत्र-स्वर्गीय अब्दुल हमद उर्फ स्वर्गीय अब्दुल हमद

2. मोहम्मद आसिफ, पुत्र-मोहम्मद असलम

3. फारिया जबीन, पत्नी-अशफाक अहमद उर्फ मोहम्मद अशफाक,

4. मोहम्मद अमानुद्दीन उर्फ मो. अमन, पुत्र-स्वर्गीय मोइनुद्दीन, सभी निवासी, पीरबहोर गली, थाना-पीरबहोर, जिला-पटना 800006।

.....याचिकाकर्ता/गण

बनाम्

1. बिहार राज्य

2. सेराजुद्दीन, पुत्र-स्वर्गीय अब्दुल सकूर, निवासी, लाल बाग, थाना-पीरबहोर, डाकघर-महेंद्रू, जिला-पटना-अब मर गया।

.....विरोधी पक्ष

==========

उपस्थितिः

याचिकाकर्ता/ओ के लिए : श्री अशोक कुमार, अधिवक्ता

राज्य के लिए : श्री उपेंद्र कुमार, एपीपी

==========

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973–धारा 482–संज्ञान वाले आदेश और सम्मन आदेश को अभिखंडित करना–सूचना देने वाला पुलिस स्टेशन में एक आवेदन दिया जिसमें कहा गया है कि याचिकाकर्ताओं द्वारा एक संज्ञेय अपराध किया गया है–जाँच के बाद, पुलिस ने संज्ञेय अपराध नहीं पाया और केवल असंज्ञेय अपराध के लिए पुलिस रिपोर्ट प्रस्तुत की–विद्वान मजिस्ट्रेट ने अपराध का संज्ञान लिया–विद्वान मजिस्ट्रेट ने शिकायत मामले में संज्ञान लेने के लिए निर्धारित प्रक्रिया का पालन किया है–मजिस्ट्रेट को संज्ञान लेने से पहले आधिकारिक शिकायतकर्ता और गवाहों की जाँच करने की आवश्यकता नहीं है–जिस घर में वे रह रहे हैं, उस घर के संबंध में पक्षकारों के बीच सिविल विवाद चल रहा है, सिविल कोर्ट में–विवादित आदेश, अपास्त और अभिखंडित किया गया–आवेदन अनुज्ञात किया गया।

(पैरा 5, 16, 18 और 20)

2010 सीआरआई. एल.जे. 2275; 1978 सीआरआई. एल.जे. 318; 2007 सीआरआई. एल.जे. 3806; (1998) 1 एस.सी.सी. 687; (2009) 1 एस.सी.सी. 407; (1992) अनुपूरक 1 एस.सी.सी. 335–**निर्भर किया गया**

==========

पटना उच्च न्यायालय का निर्णय आदेश

==========

कोरमः माननीय न्यायमूर्ति श्री जितेंद्र कुमार

मौखिक निर्णय

तारीख: 26-04-2024

वर्तमान याचिका याचिकाकर्ताओं द्वारा जी.आर. में पारित दिनांक 07.09.2016 के आक्षेपित आदेश को रद्द करने के लिए आ.दं.सं की धारा 482 के तहत दायर की गई है। संख्या 3835 दिनांक 2016 पीरबहोर थाना के संबंध में श्री ओम प्रकाश, मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, पटना द्वारा 2016 का केस नंबर 164, जिसके तहत विद्वान दंडाधिकारी ने 2016 की पुलिस रिपोर्ट संख्या 201 पर भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 341,

323, 504 के तहत दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया है और आरोपी-याचिकाकर्ताओं के खिलाफ समन जारी करने का निर्देश दिया है।

2. उपरोक्त पीरबहोर थाना कांड संख्या 164/2016 दिनांक 19.6.2016 को भारतीय दंड संहिता की धारा 341, 323, 504, 379 और 354 सहपठित धारा 34 तथा अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति अधिनियम की धारा 3(i)(x) के अंतर्गत दंडनीय कथित अपराध के लिए दर्ज किया गया था। यह प्रथम सूचना प्रतिवेदन सेराजुद्दीन नामक व्यक्ति की लिखित रिपोर्ट पर दर्ज की गई थी, जिसकी अब मृत्यु हो चुकी है।

3. लिखित रिपोर्ट के अनुसार, सूचक लाल बाग, पीरबहोर, पोस्ट महेंद्रू, थाना पीरबहोर, पटना का निवासी है, तथा वह 50-60 वर्षों से इस मकान में रह रहा है। उन्होंने रिपोर्ट का शीर्षक "जानलेवा हमला एवं भूमि विवाद के संबंध में" लिखा है। आरोप के अनुसार 19.6.2016 को 12 बजे जब सूचक आंगन में बैठा था, तो मकान में किराएदार के रूप में रह रहे आरोपीगण (यहां याचिकाकर्ता) कुछ अज्ञात व्यक्तियों के साथ आए और सूचक को गाली देने लगे तथा उसके साथ दुर्व्यवहार करने पर आमादा हो गए। खुद को बचाने के लिए उसने अपने परिवार के सदस्यों को बुला लिया। फिर वे उसके परिवार के सदस्यों के साथ मारपीट करने लगे और उसकी नतनी की सोने की अंगूठी छीन ली और हाथों में पिस्तौल लहराते हुए और धमकी देते हुए चले गए। हालांकि, जांच के बाद पुलिस को संज्ञेय अपराध का पता नहीं चला और उसने केवल भारतीय दंड संहिता की धारा 341, 323, 504 के साथ धारा 34 के तहत दंडनीय गैर-संज्ञेय अपराध के लिए पुलिस रिपोर्ट प्रस्तुत की। तदनुसार, विद्वान दंडाधिकारी ने भारतीय दंड संहिता की धारा 341, 323, 504 के साथ धारा 34 के तहत दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया।

4. मैंने याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील और राज्य के विद्वान वकील को सुना।

5. याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील ने दलील दी कि विवादित आदेश दो कारणों से कानून की नजर में टिकने लायक नहीं है; सबसे पहले, दंडाधिकारी ने शिकायत मामले में संज्ञान लेने के लिए निर्धारित प्रक्रिया का पालन नहीं किया है। उन्होंने धारा 2(घ) और धारा 200 आ.दं.सं का हवाला देते हुए दलील दी कि मौजूदा मामले में गैर संज्ञेय अपराध का

खुलासा करने वाली पुलिस रिपोर्ट को शिकायत माना जाना चाहिए था और जांच अधिकारी को शिकायतकर्ता माना जाना चाहिए था और संज्ञान लेने से पहले दंडाधिकारी द्वारा उसकी जांच की जानी चाहिए थी। लेकिन जांच अधिकारी की जांच किए बिना विद्वान दंडाधिकारी ने अपराध का संज्ञान ले लिया। इस तरह, विवादित आदेश टिकने लायक नहीं है।

6. याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील की अगली दलील यह है कि पूरी शिकायत दुर्भावना से दायर की गई है। वास्तव में, याचिकाकर्ताओं और सूचनाकर्ता के बीच उस घर के संबंध में दीवानी विवाद है जिसमें वे रह रहे हैं। विचाराधीन घर उनकी (याचिकाकर्ताओं की) अपनी संपत्ति है और उन्होंने घर का कुछ हिस्सा सूचनाकर्ता को पट्टे पर दे रखा है। लेकिन सूचनाकर्ता/किराएदार खुद को घर का मालिक बता रहा है और इस विवाद के कारण, याचिकाकर्ताओं ने सूचनाकर्ता के खिलाफ बेदखली का मुकदमा दायर किया है और इस दीवानी विवाद के कारण, याचिकाकर्ताओं पर दबाव डालने के लिए दुर्भावना से सूचनाकर्ता द्वारा वर्तमान आपराधिक मामला दर्ज किया गया है।

7. हालांकि, राज्य के लिए विद्वान एपीपी ने विवादित आदेश का बचाव करते हुए कहा कि विवादित आदेश में कोई अवैधता या दुर्बलता नहीं है। उन्होंने आगे कहा कि जांच के दौरान एकत्र की गई पुलिस सामग्री के अनुसार, भारतीय दंड संहिता की धारा 341, 323, 504 के साथ धारा 34 के तहत अपराध बनता है। उन्होंने आगे कहा कि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के अनुसार, विद्वान दंडाधिकारी को संज्ञान लेने से पहले आई.ओ. की जांच करना अनिवार्य नहीं है, क्योंकि आ.दं.सं की धारा 200 के पहले प्रावधान के अनुसार, आधिकारिक शिकायतकर्ता की जांच करने की आवश्यकता नहीं है। इस प्रकार, संज्ञान लेते समय विद्वान मजिस्ट्रेट की ओर से कोई चूक नहीं हुई है।

8. मैंने रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्रियों का अवलोकन किया और दोनों पक्षों द्वारा दी गई दलीलों पर विचार किया। हालाँकि, आगे बढ़ने से पहले, प्रश्न पर प्रचलित कानूनी स्थिति का पता लगाने के लिए प्रासंगिक वैधानिक प्रावधानों और केस कानूनों का संदर्भ लेना प्रासंगिक होगा।

9. आ.दं.सं की **धारा-2(घ)** जो शिकायत को परिभाषित करती है, इस प्रकार है:

धारा-2(घ)- शिकायत" का अर्थ है किसी मजिस्ट्रेट के समक्ष मौखिक या लिखित रूप से किया गया कोई आरोप, इस संहिता के तहत कार्रवाई करने के उद्देश्य से, कि किसी व्यक्ति ने, चाहे वह ज्ञात हो या अज्ञात, कोई अपराध किया है, लेकिन इसमें पुलिस रिपोर्ट शामिल नहीं है।

स्पष्टीकरण- किसी मामले में पुलिस अधिकारी द्वारा की गई रिपोर्ट, जिसमें जांच के बाद किसी असंज्ञेय अपराध की चूक का खुलासा होता है, शिकायत मानी जाएगी; और जिस पुलिस अधिकारी द्वारा ऐसी रिपोर्ट की जाती है, उसे शिकायतकर्ता माना जाएगा।"

10. आ.दं.सं की धारा 200. पी.सी जो शिकायत मामले में शिकायतकर्ता और गवाहों की जांच का प्रावधान करता है, इस प्रकार पढ़ेः

"धारा 200. शिकायत की जांच - - शिकायत पर अपराध का संज्ञान लेने वाला दंडाधिकारी शिकायतकर्ता और उपस्थित गवाहों, यदि कोई हो, की शपथ पर जांच करेगा और ऐसी जांच का सार लिखित रूप में दर्ज किया जाएगा और उस पर शिकायतकर्ता और गवाहों के साथ-साथ दंडाधिकारी द्वारा भी हस्ताक्षर किए जाएंगे:

बशर्ते कि जब शिकायत लिखित रूप में की जाती है, तो दंडाधिकारी को शिकायतकर्ता और गवाहों की जांच करने की आवश्यकता नहीं है -

(क) यदि कोई लोक सेवक अपने आधिकारिक कर्तव्यों के निर्वहन में कार्य कर रहा है या कार्य करने का अभिप्राय रखता है या किसी न्यायालय ने शिकायत की है; या

(ख) यदि दंडाधिकारी धारा 192 के तहत जांच या परीक्षण के लिए मामले को किसी अन्य दंडाधिकारी को सौंपता है;

बशर्ते कि यदि दंडाधिकारी शिकायतकर्ता और गवाहों की जांच करने के बाद धारा 192 के तहत मामले को किसी अन्य दंडाधिकारी को सौंप देता है, तो बाद वाले दंडाधिकारी को उनकी दोबारा जांच करने की आवश्यकता नहीं है।

(जोर दिया गया)

11. इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा तय किए गए समान मामले- **चांद और अन्य बनाम राज्य उत्तर प्रदेश और अन्य (2010 आ. एल.जे. 2275)** का संदर्भ लेना लाभदायक होगा। इस मामले में भी, याचिकाकर्ता द्वारा धारा 482 आ.दं.सं के तहत एक याचिका दायर की गई थी, जिसमें याचिकाकर्ता के खिलाफ दायर आरोपपत्र को रद्द करने के लिए धारा 323, 504 और 506 भा.दं.सं के तहत दंडनीय गैर-संज्ञेय अपराध का खुलासा किया गया था। उक्त आरोपपत्र के आधार पर, विद्वान दंडाधिकारी ने संज्ञान लिया था और याचिकाकर्ता को उपरोक्त अपराधों के लिए बुलाया था। यह तर्क दिया गया था कि विद्वान दंडाधिकारी को आरोपपत्र को शिकायत मामले के रूप में मानना चाहिए न कि राज्य के मामले के रूप में। लेकिन विद्वान दंडाधिकारी ने गलती से संज्ञान लिया और आ.दं.सं. की धारा 200 के तहत जांच अधिकारी का बयान दर्ज किए बिना समन आदेश पारित कर दिया। हालांकि, उच्च न्यायालय याचिकाकर्ता के वकील की दलील से सहमत नहीं था और उसने माना कि याचिकाकर्ता के वकील की दलील आ.दं.सं. की धारा 200 के प्रावधान के मद्देनजर गलत थी, जिसमें कहा गया है कि जब भी कोई लोक सेवक लिखित रूप से शिकायत करता है, तो दंडाधिकारी को शिकायतकर्ता या गवाहों की जांच करने की आवश्यकता नहीं होती है। मामले के प्रासंगिक पैराग्राफ इस प्रकार हैं:

> "9. जांच के बाद पुलिस अधिकारी की स्पष्टीकरण रिपोर्ट के मद्देनजर असंज्ञेय अपराध का खुलासा करना एक शिकायत माना जाना चाहिए और रिपोर्ट प्रस्तुत करने वाले पुलिस अधिकारी को शिकायतकर्ता माना जाना चाहिए। दूसरे शब्दों में, असंज्ञेय अपराध में पुलिस द्वारा प्रस्तुत आरोप पत्र को एक शिकायत माना जाएगा और शिकायत मामले की सुनवाई के लिए निर्धारित प्रक्रिया उस मामले पर लागू होगी।
>
> 10. वर्तमान मामले में जांच अधिकारी द्वारा प्रस्तुत आरोप पत्र को एक शिकायत माना जाएगा और दंडाधिकारी द्वारा लिया गया संज्ञान एक शिकायत पर लिया गया माना जाएगा।
>
> 11. आवेदक के विद्वान वकील ने तर्क देने की कोशिश की कि चूंकि आरोप पत्र को एक शिकायत के रूप में माना जाना चाहिए, इसलिए दंडाधिकारी तब तक अपराधों का संज्ञान नहीं ले सकता जब तक कि दंडाधिकारी आ.दं.सं की धारा 200 के तहत जांच अधिकारी का बयान दर्ज नहीं किया।

12. मैंने इस तर्क पर विचार किया और मुझे लगता है कि यह गलत है। दंड प्रक्रिया की धारा 200 के प्रावधान में यह प्रावधान है कि जब भी कोई लोक सेवक लिखित रूप में शिकायत करता है, तो दंडाधिकारी को शिकायतकर्ता या गवाहों की जांच करने की आवश्यकता नहीं होती है।

13. वर्तमान मामले में भी शिकायत लोक सेवक द्वारा दायर की गई है, इसलिए मजिस्ट्रेट को धारा 200 या 202 सीआरपीसी के तहत बयान दर्ज करने की आवश्यकता नहीं थी।"

12. कलकत्ता उच्च न्यायालय ने **बिश्वनाथ सराफ बनाम राज्य (1978 सीआर. एल.जे. 318)** में भी इसी प्रकार का दृष्टिकोण अपनाया है, जिसमें निम्न प्रकार से कहा गया है:

"4..... धारा 2(घ) के स्पष्टीकरण में यह प्रावधान है कि एक मामले में एक पुलिस अधिकारी द्वारा की गई रिपोर्ट, जो जांच के बाद, गैर-संज्ञेय अपराध का खुलासा करती है, को एक शिकायत माना जाएगा और शिकायतकर्ता माना जाएगा। इसलिए, धारा 190(1)(क) के तहत विद्वान मजिस्ट्रेट शिकायत के आधार पर संज्ञान ले सकता है क्योंकि वर्तमान मामले में चालान होगा और पुलिस अधिकारी एक लोक सेवक होने के नाते उसे धारा 200 के तहत जांच करने की आवश्यकता नहीं है अपराधी पी.सी. एस.200(ए) के आधार पर। तदनुसार, मेरा मानना है कि विद्वान मजिस्ट्रेट चालान के आधार पर मामले का संज्ञान लेने में पूरी तरह से सख्त थे, जो किसी भी कानूनी दोष से प्रभावित नहीं था।

(जोर दिया गया)

13. कर्नाटक उच्च न्यायालय ने सी.पी. योगेश्वर बनाम रजिस्ट्रार, कर्नाटक लोकायुक्त (2007 क्रि एल जे 3806) में यह भी माना है कि धारा 200 आ.दं.सं. के प्रावधान को धारा-190 आ.दं.सं के साथ पढ़ने पर यह स्पष्ट है कि जहां कोई शिकायत किसी लोक सेवक द्वारा लिखित रूप में की जाती है, जो अपने आधिकारिक कर्तव्यों के निर्वहन में कार्य कर रहा

है या कार्य करने का दावा कर रहा है, दंडाधिकारी को शिकायतकर्ता और गवाहों की जांच करने की आवश्यकता नहीं है, उन्होंने निम्नलिखित टिप्पणी की:

> "7. यह विवाद में नहीं है कि शिकायत लोकायुक्त के रजिस्ट्रार द्वारा दर्ज की गई थी। धारा 200, परंतुक (क) को धारा 190(1) के साथ पढ़ने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि जहां शिकायत लिखित रूप में की गई है और यदि उक्त शिकायत किसी लोक सेवक द्वारा की गई है जो अपने आधिकारिक कर्तव्यों के निर्वहन में कार्य कर रहा है या करने का दावा कर रहा है, तो दंडाधिकारी को शिकायतकर्ता और गवाहों की जांच करने की आवश्यकता नहीं है। इसलिए, उपरोक्त प्रावधान याचिकाकर्ता के विद्वान वकील द्वारा दिए गए पहले आधार का उत्तर देता है और इसलिए शिकायतकर्ता के शपथ कथन को दर्ज न करना इस मामले में कोई कमी नहीं है।"

14. एसोसिएटेड सीमेंट कंपनी लिमिटेड बनाम केशवानंद, (1998) 1 एस. सी. सी. 687, सर्वोच्च न्यायालय ने भी इसी तरह का विचार व्यक्त किया है, जो इस प्रकार है:

> "22..... शपथ पर शिकायतकर्ता की ऐसी जांच केवल दो स्थितियों में ही की जा सकती है, एक तो अगर शिकायत किसी सरकारी कर्मचारी द्वारा दर्ज की गई हो, जो अपने आधिकारिक कर्तव्यों के निर्वहन में काम कर रहा हो या करने का दावा कर रहा हो और दूसरी तब जब शिकायत किसी अदालत ने की हो। उपरोक्त समझ में आने वाली स्थितियों को छोड़कर, शिकायतकर्ता को दंडाधिकारी द्वारा जांच के लिए अपनी शारीरिक उपस्थिति दर्ज करानी होगी। नई संहिता की धारा 256 या धारा 249 दंडाधिकारी को शिकायतकर्ता के अनुपस्थित होने पर शिकायत को खारिज करने का अधिकार क्षेत्र प्रदान करती है, जिसका अर्थ है उसकी शारीरिक अनुपस्थिति।"
>
> (जोर दिया गया)

15. राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम लिमिटेड बनाम राज्य (एनसीटी दिल्ली), (2009) 1 एससीसी 407 में भी **माननीय सर्वोच्च न्यायालय** ने इसी प्रकार का दृष्टिकोण व्यक्त किया है, जिसमें निम्न प्रकार से कहा गया है:

> "20. इस प्रकार, उठाए गए प्रश्न का उत्तर यह है: जहां एक अमूर्त निकाय भुगतानकर्ता है और शिकायत में ऐसे अमूर्त निकाय का प्रतिनिधित्व करने वाला कर्मचारी एक लोक सेवक है, वह वास्तविक शिकायतकर्ता होने के कारण, संहिता की धारा 200 के प्रावधान का खंड (ए) लागू होगा और परिणामस्वरूप, मजिस्ट्रेट को शिकायतकर्ता और गवाहों की जांच करने की आवश्यकता नहीं है।"

16. इस प्रकार मैं पाता हूं कि वैधानिक प्रावधानों और केस कानूनों के मद्देनजर इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि गैर-संज्ञेय अपराध का खुलासा करने वाले पुलिस अधिकारी द्वारा प्रस्तुत कोई भी आरोप पत्र आ.दं.सं की धारा-2 (डी) के मद्देनजर शिकायत माना जाता है और पुलिस अधिकारी को शिकायतकर्ता माना जाता है। इस प्रकार, एक दंडाधिकारी न्यायालय को, ऐसे आरोप पत्र प्रस्तुत करने के मामले में, शिकायत मामले की प्रक्रिया का पालन करना आवश्यक है। हालांकि, धारा 200 आ.दं.सं. के प्रावधान से यह भी स्पष्ट है कि सरकारी कर्तव्यों के निर्वहन में लोक सेवक द्वारा दायर की गई शिकायत के संबंध में प्रक्रिया एक निजी व्यक्ति द्वारा दायर की गई शिकायत से कुछ अलग है। आ.दं.सं. की धारा 200 के प्रावधान के अनुसार, मजिस्ट्रेट को संज्ञान लेने से पहले आधिकारिक शिकायतकर्ता और गवाहों की जांच करना अनिवार्य नहीं है।

17. इस प्रकार, मुझे याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील के प्रथम प्रस्तुतिकरण में कोई गुण या सार नहीं लगता।

18. याचिकाकर्ताओं के वकील एल.डी. के दूसरे प्रस्तुतिकरण पर आते हुए, मुझे लगता है कि जिस घर में सूचनाकर्ता और अभियुक्त-याचिकाकर्ता रह रहे हैं, उसके स्वामित्व को लेकर विवाद है। दोनों ही संपत्ति पर स्वामित्व का दावा कर रहे हैं और दूसरे पक्ष को किराएदार बता रहे हैं और उनके बीच पहले से ही सिविल न्यायालय में एक दीवानी विवाद चल रहा है। इस प्रकार, ऐसा लगता है कि शिकायत दुर्भावनापूर्ण तरीके से दायर की गई है। इसके अलावा,

रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री के अनुसार भारतीय दंड संहिता की धारा 323 और 504 के तहत दंडनीय अपराध के लिए प्रथम दृष्टया मामला भी नहीं बनता है।

19. इसलिए, आरोपित आदेश को आधार संख्या 1 पर रद्द किया जाना चाहिए। 3 और 7 जैसा कि **माननीय सर्वोच्च न्यायालय** ने **हरियाणा राज्य बनाम भजन लाल (1992) सप्लीमेंट (1) एससीसी 335** के पैरा 102 में कहा है। **भजन लाल मामले (सुप्रा)** का प्रासंगिक पैरा इस प्रकार है:

> "**102.** अध्याय XIV के तहत संहिता के विभिन्न प्रासंगिक प्रावधानों की व्याख्या और अनुच्छेद 226 के तहत असाधारण शक्ति या संहिता की धारा 482 के तहत निहित शक्तियों के प्रयोग से संबंधित निर्णयों की श्रृंखला में इस न्यायालय द्वारा प्रतिपादित कानून के सिद्धांतों की पृष्ठभूमि में, जिन्हें हमने ऊपर उद्धृत और पुन: प्रस्तुत किया है, हम उदाहरण के तौर पर मामलों की निम्नलिखित श्रेणियां देते हैं जिनमें ऐसी शक्ति का प्रयोग या तो किसी अदालत की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए या अन्यथा न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए किया जा सकता है, हालांकि कोई सटीक, स्पष्ट रूप से परिभाषित करना संभव नहीं हो सकता है और पर्याप्त रूप से चैनलाइज़्ड और अनम्य दिशानिर्देश या कठोर सूत्र और असंख्य प्रकार के मामलों की एक विस्तृत सूची दें जिनमें ऐसी शक्ति का प्रयोग किया जाना चाहिए
>
> (1) जहां प्रथम सूचना रिपोर्ट या शिकायत में लगाए गए आरोप, भले ही उन्हें उनके अंकित मूल्य पर लिया जाए और उनकी संपूर्णता में स्वीकार किया जाए, प्रथम दृष्टया कोई अपराध नहीं बनाते हैं या अभियुक्त के खिलाफ कोई मामला नहीं बनाते हैं।
>
> (2) जहां प्रथम सूचना रिपोर्ट और एफआईआर के साथ दी गई अन्य सामग्री, यदि कोई हो, में लगाए गए आरोप किसी संज्ञेय अपराध का खुलासा नहीं करते हैं, तो संहिता की धारा 155(2) के दायरे में मजिस्ट्रेट के आदेश के अलावा संहिता की धारा 156(1) के तहत पुलिस अधिकारियों द्वारा जांच को उचित ठहराया जा सकता है।

(3) जहां प्रथम सूचना प्रतिवेदन या शिकायत में लगाए गए निर्विवाद आरोप और उनके समर्थन में एकत्र किए गए साक्ष्य किसी अपराध के होने का खुलासा नहीं करते हैं और आरोपी के खिलाफ मामला बनाते हैं।

(4) जहां प्रथम सूचना प्रतिवेदन में लगाए गए आरोप संज्ञेय अपराध नहीं हैं, बल्कि केवल असंज्ञेय अपराध हैं, वहां पुलिस अधिकारी द्वारा दंडाधिकारी के आदेश के बिना कोई जांच करने की अनुमति नहीं है, जैसा कि संहिता की धारा 155(2) के तहत परिकल्पित है।

(5) जहां प्रथम सूचना प्रतिवेदन या शिकायत में लगाए गए आरोप इतने बेतुके और स्वाभाविक रूप से असंभव हैं, जिनके आधार पर कोई भी विवेकशील व्यक्ति कभी भी इस निष्कर्ष पर नहीं पहुंच सकता है कि आरोपी के खिलाफ कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार है।

(6) जहां संहिता या संबंधित अधिनियम (जिसके तहत एक आपराधिक कार्यवाही शुरू की जाती है) के किसी भी प्रावधान में संस्था और कार्यवाही जारी रखने पर स्पष्ट कानूनी रोक है और/या जहां संहिता में कोई विशिष्ट प्रावधान है या संबंधित अधिनियम, पीड़ित पक्ष की शिकायत के लिए प्रभावी निवारण प्रदान करता है

(7) जहां आपराधिक कार्यवाही में स्पष्ट रूप से दुर्भावना हो और/या जहां कार्यवाही दुर्भावनापूर्ण तरीके से अभियुक्त पर प्रतिशोध लेने और निजी और व्यक्तिगत द्वेष के कारण उसे परेशान करने के उद्देश्य से शुरू की गई हो।

103. हम इस आशय की चेतावनी भी देते हैं कि आपराधिक कार्यवाही को रद्द करने की शक्ति का प्रयोग बहुत ही संयम और सावधानी के साथ किया जाना चाहिए और वह भी दुर्लभतम मामलों में; कि न्यायालय द्वारा प्रथम सूचना प्रतिवेदन या शिकायत में लगाए गए आरोपों की विश्वसनीयता या वास्तविकता या अन्यथा के बारे में जांच शुरू करना न्यायोचित नहीं होगा और यह कि

असाधारण या अंतर्निहित शक्तियां न्यायालय को अपनी मर्जी या मनमौजीपन के अनुसार कार्य करने का मनमाना अधिकार क्षेत्र प्रदान नहीं करती हैं।"

(जोर दिया गया)

20. तदनुसार, वर्तमान याचिका को पीरबहोर पी.एस. केस संख्या 164/2016 में विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, पटना द्वारा पारित दिनांक 7.9.2016 के विवादित आदेश को रद्द करने और अलग रखने की अनुमति दी जाती है, जो कि जी.आर. संख्या 3835/2016 से संबंधित है।

(जितेंद्र कुमार, न्यायमूर्ति)

एस.अली/रविशंकर/चंदन -

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।